जोइन्दु कृत अमृताशीति

सुदीप कुमार जैन

आचार्य जोइन्दु को आधुनिक इतिहासवेत्ताओं एवं मनीषियों[1] ने छठवीं शताब्दी ईस्वी के आध्यात्मिक क्रान्ति-द्रष्टा महापुरुष व अपभ्रंश के महाकवि के रूप में स्वीकार किया है। उनकी बहुश्रुत व सुनिर्णीत कृतियों—परमात्मप्रकाश (परमप्पयासु) व योगसार (जोगसारु) के आधार पर ये दोनों धारणायें (काल—छठवीं शती० ई० व अपभ्रंश के कवि) सुनिश्चित की गई हैं। परन्तु उनकी अन्य दो कृतियाँ इन दोनो धारणाओं पर प्रश्नचिह्न अंकित कर रही हैं। ये दोनों कृतियाँ हैं—(१) निजात्माष्टक और (२) अमृताशीति।

इसमें 'निजात्माष्टक' प्राकृत रचना है और 'अमृताशीति' संस्कृत में रचित है। यह इस तथ्य का द्योतक है कि जोइन्दु मात्र अपभ्रंश भाषा के ही कवि नहीं थे, अपितु अपभ्रंश के साथ-साथ प्राकृत और संस्कृत पर भी उनका समान अधिकार था।

अब हम काल सम्बन्धी मान्यता पर विचार करते हैं। डॉ० ए० एन० उपाध्ये ने विविध साक्ष्यों की समीक्षा कर आचार्य कुन्दकुन्द (प्रथम शताब्दी ई०) व आचार्य पूज्यपाद (पाँचवीं शताब्दी) के साहित्य का प्रभाव जोइन्दु पर देखते हुए इनका काल ईसा की छठीं शताब्दी निर्धारित किया है।[2] इसके विपरीत आचार्य जोइन्दु ने अपने अमृताशीति नामक ग्रन्थ में आचार्य भट्टाकलंक देव तथा आचार्य विद्यानन्दी स्वामी का नामोल्लेख करते हुए उनके ग्रन्थों के उद्धरण दिये हैं।[3] चूँकि इन दोनों का काल क्रमशः ६-७ वीं शती स्वीकृत किया गया है। अतः जोइन्दु के काल के विषय में पुनर्विचार अत्यन्तावश्यक है।

प्रस्तुत 'अमृताशीति' नामक ग्रन्थ आचार्य जोइन्दु की ही रचना है। इसकी पुष्टि में कतिपय प्रमाण प्राप्त होते हैं। यद्यपि डॉ० ए० एन० उपाध्ये प्रभृति विद्वानों ने इसे जोइन्दु का ग्रन्थ स्वीकार किया है; परन्तु उन्हें यह ग्रन्थ प्राप्त नहीं हो सका था।[4] इस ग्रन्थ को आचार्य जोइन्दु कृत प्रमाणित करने वाले कुछ प्राचीन व ऐतिहासिक साक्ष्यों का विवरण इस प्रकार है—

(१) नियमसार (आ० कुन्दकुन्द) के टीकाकार पद्मप्रभमलधारिदेव (११४०-११८५ ई०) ने अपनी तात्पर्यवृत्ति टीका में[5] अमृताशीति के १९ वें, ५५ वें, ५६ वें, ५७ वें तथा ६१ वें छन्दों को तथा 'चोक्तममृताशीतौ' एवं 'तथाचोक्तं योगीन्द्रदेवैः' कहकर उद्धृत किया है।

(२) आचार्य जोइन्दु के चारों ग्रन्थों (परमात्मप्रकाश, योगसार, निजात्माष्टक और

---

१. डॉ० ए० एन० उपाध्ये आदि।

२. अगास से प्रकाशित परमात्मप्रकाश योगसार की भूमिका : डॉ० ए० एन० उपाध्ये।

३ अमृताशीति, छन्द क्रमांङ्क ५९ व ६८।

४. परमात्मप्रकाश—योगसार की डॉ० ए० एन० उपाध्ये की प्रस्तावना।

५ नियमसार, तात्पर्यवृत्ति क्रमशः गाथा १०४, ४३, १८०, १२४ व १४७ की टीकाओं में उद्धृत।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमृताशीति) के सर्वमान्य टीकाकार मुनि बालचन्द्र (ई० १३५०) ने जो सिद्धान्त चक्रवर्ती नभकीर्तिदेवके शिष्य थे, इन चारों ग्रन्थों की टीकाओं के प्रारम्भ में एक ही पंक्ति दी है—

'श्री योगीन्द्रदेवरु प्रभाकरभट्टप्रतिबोधनार्थम्····· अभिधानग्रन्थम्[1]।

इससे स्पष्ट होता है कि १४ वीं शताब्दी तक यह आचार्य जोइन्दु द्वारा विरचित ग्रन्थ के रूप में सर्वमान्य था। ये वही आचार्य जोइन्दु थे जिन्होंने प्रभाकर भट्ट नामक शिष्य के अनुरोध पर ग्रन्थ की रचना की थी।

(३) अमृताशीति की प्रशस्ति में उन्होंने अपना नामोल्लेख भी किया है।[2]

अमृताशीति के बारे में अन्य विप्रतिपत्तियाँ

(क) डॉ हीरालाल जैन ने 'परमात्मप्रकाश' की प्रस्तावना[3] में इसे अपभ्रंश भाषा का ग्रन्थ कहा गया है; जबकि मुझे प्राप्त इसकी एकमात्र तथा कन्नड़ ताड़पत्रीय प्रति विशुद्ध संस्कृत भाषा में निबद्ध है तथा 'नियमसार' की टीका में उद्धृत पाँचों श्लोक भी संस्कृत के ही हैं। इस स्थिति में डॉ० हीरालाल जी द्वारा इसे अपभ्रंश का ग्रंथ कहने का क्या आधार रहा है, यह अज्ञात है।

(ख) डॉ० हीरालाल जी ने इसे ८२ छन्दों का ग्रन्थ बताया है[4] जबकि उपलब्ध पाण्डुलिपि में ८० छन्द ही हैं। डॉ० हीरालालजी को इस ग्रन्थ की कोई प्रति प्राप्त नहीं हुई थी, फिर पता नहीं उन्होंने किस आधार पर इसे ८२ छन्दों के परिमाण वाला कहा।

(ग) पं० नाथूराम प्रेमी इसका अपरनाम 'अध्यात्मसंदोह' मानते हैं,[5] परन्तु यह निराधार प्रतीत होता है।

(घ) जैनेन्द्रसिद्धान्तकोशकार ने (अध्यात्मसंदोह को) प्राकृत का ग्रन्थ कहा है[6] परन्तु इस मान्यता का कोई आधार नहीं दिया है।

(ङ) 'अमृताशीति' को जैनेन्द्रसिद्धान्तकोशकार अपभ्रंश भाषा का ग्रन्थ मानते हैं,[7] परन्तु क्यों ? यह प्रश्न वहाँ भी अनुत्तरित ही है।

विषयगत वैशिष्टय

'अमृताशीति' में प्रतिपादित तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन रोचक व महत्त्वपूर्ण है। इसमें कई तथ्य ऐसे प्राप्त होते हैं जो 'परमात्मप्रकाश' तथा 'योगसार' में प्रतिपादित मान्यताओं

१. अमृताशीति की कन्नड़ टीका (मुनिबालचन्द्र कृत) की उत्थानिका

२. अमृताशीति, छन्द ८० वाँ।

३. परमात्मप्रकाश की प्रस्तावना, डॉ० हीरालालजैन पृ० ११६ (जैनेन्द्र सि०को० भाग१, पृ० १३७)

४. वही

५. जै० सि० को० भाग १, पृ० ५४ ।

६. वही

७. जै० सि० को० भाग ३, पृ० ४०१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से अलग प्रमेयों का प्रतिपादन करते हैं। इस तथ्य को निम्न दृष्टान्तों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है—

अ) 'पुण्य' का महत्त्व—'अमृतशीति' में आचार्य जोइन्दु ने पुण्य का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए, पुण्यात्मा होना आत्महित या धर्मलाभ के लिए आवश्यक बतलाया है[१], यद्यपि इसमें कोई सैद्धान्तिक विरोध नहीं है, फिर भी यह कथन 'परमात्मप्रकाश' के उस प्रतिपादन से सर्वथा भिन्न है, जिसमें वे पुण्य को पाप के समान हेय व तुच्छ गिनाते हैं।

(ब) 'समता' का महत्त्व—वैसे तो सम्पूर्ण जैन वाङ्मय में समता या साम्यभाव का बड़ा ही महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। परन्तु परमात्मप्रकाश या योगसार में समता शब्द या इसके वाच्य को इतना महिमामंडित कहीं नहीं किया गया, जितना कि 'अमृताशीति' के १४वें से २५ वें छन्द तक प्राप्त होता है। वे 'समता' को कुलदेवता[२], देवी[३], शरणस्थली[४], मैत्र्यादि की सखी[५] आदि अनेकों विशेषणों से छायावाद जैसी शैली में सम्बोधित करते हैं।

(स) गुरु का अति महत्त्व—जैसे परवर्ती हिन्दी रहस्यवादी साहित्य में कबीर आदि सन्तों ने गुरु—रूप को अत्यन्त गौरव प्रदान किया है, उसी प्रकार 'अमृताशीति' में भी कई स्थलों पर[६] गुरु की अपार महिमा व अनिवार्यता प्रदर्शित की गई है। यह वर्णन देव-शास्त्र-गुरु के आत्महित में निमित्तरूप प्रतिपादन के सामान्य महत्त्व से हटकर भिन्न शैली में प्रस्तुत किया गया है।

(द) हठयोग शब्दावली—हठयोग व योगशास्त्रीय शब्दों का किंचित् प्रयोग यद्यपि 'योगसार' में भी आया है[७], परन्तु 'अमृताशीति' में प्रचुर मात्रा में इस शब्दावली का प्रयोग है। कई शब्द तो ऐसे भी हैं, जो कि जोइन्दु ने 'योगसार' में भी प्रयुक्त नहीं किये गये हैं—यथा—स्वहंसहरिविष्टर[८], अर्हन्हिमांशु[९], अर्हंमंत्रसार[१०], द्वैकाक्षरं, पिण्डरूपं[११], अनाहतं

१. अमृताशीति छन्द २रे से ९ वें छन्द तक।
२. वही, छन्द १९
३. वही, छन्द १
४. वही, छन्द २२,
५. वही, छन्द २५,
६. वही, छन्द २७
७. योगसार दोहा ९८
८. अमृताशीति छन्द २९
९. वही, छन्द ३२
१०. वही, छन्द ३३
११. वही, छन्द ३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्वनति[१], बिन्दुदेव[२], योगनिद्रा[३], नालिद्वार[४], हृदयकमलगर्भ,[५], श्रवणयुगलमूलाकाश[६] तथा सद्द्वारसार[७] आदि। इन शब्दों का उन्होंने प्रयोग जैन रहस्यवादी या आध्यात्मिक अर्थों व ध्यान की प्रक्रिया के सन्दर्भों में किया है। इसमें कुछ छन्द तो ऐसे हैं, जो कि विशुद्ध योगशास्त्रीय व रहस्यवादी धारा का चरमोत्कर्ष प्रस्तुत करते हैं।[८]

डॉ० नेमिचन्द जैन शास्त्री, ज्योतिषाचार्य स्वीकारते हैं कि 'जैन रहस्यवाद का निरूपण रहस्यवाद के रूप में सर्वप्रथम इन्हीं (जोइन्दु) से आरम्भ होता है। यों तो कुन्दकुन्द, वट्टकेर और शिवार्य की रचनाओं में भी रहस्यवाद के तत्त्व विद्यमान हैं, पर यथार्थतः रहस्यवाद का रूप जोइन्दु की रचनाओं में ही प्राप्त होता है। ..... इस प्रकार जोइन्दु.....ऐसे सर्वप्रथम कवि हैं जिन्होंने क्रान्तिकारी विचारों के साथ आत्मिक रहस्यवाद की प्रतिष्ठा कर मोक्ष का मार्ग बतलाया है।[९]"

इस प्रकार निष्कर्षतः तीन बिन्दु विचारार्थ प्रस्तुत होते हैं—

१. योगीन्द्र या जोइन्दु छठीं शताब्दी ई० के कवि नही हैं। मेरे मन्तव्य अनुसार अकलंक व विद्यानन्दी का उल्लेख करने से इन्हें आठवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध व नवमी शताब्दी के पूर्वार्द्ध का कवि होना चाहिए।

२. जोइन्दु की संस्कृत भाषामयी 'अमृताशीति' व प्राकृतभाषामयी 'निजात्माष्टक' कृतियों के प्रामाणिक रूप से मिल जाने के बाद इन्हें मात्र अपभ्रंश भाषा का महाकवि कहना उचित नहीं, यह अपभ्रंश के महाकवि तो हैं ही, परन्तु प्राकृत और संस्कृत पर भी आपका समान अधिकार सिद्ध होता है।

३. सिद्धान्त चक्रवर्ती नयकीर्तिदेव के शिष्य व अनेक ग्रन्थों के विश्रुत कन्नड़ टीकाकार मुनि बालचन्द्र के आधार पर 'अमृताशीति' व 'निजात्माष्टक'—इन दोनों ग्रन्थों को हम 'परमात्म प्रकाश' व 'योगसार' के समान ही आचार्य जोइन्दु की प्रामाणिक कृतियाँ मान सकते हैं।

—व्याख्याता, जैन दर्शन विभाग
लालबहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ
नई दिल्ली–११००१६

---

१. अमृताशीति,
२. वही, छन्द ३८
३. वही, छन्द ३९
४. वही, छन्द ४०
५. वही, छन्द ४३
६. वही, छन्द ४५
७. वही, छन्द ४५
८. वही, छन्द ४६, ४८, ७३।
९. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा (खण्ड २) पृ० २५३–२५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org